Chapter-2

अध्याय 2

राष्ट्रीय आन्दोलन और राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का विकास

अध्याय 2

राष्ट्रीय आन्दोलन और राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का विकास

अंग्रेजों के आगमन से भारत का सम्बन्ध यूरोप की एक प्रगतिशील जाति से हुआ। वे यहाँ व्यापार के लिए आए परन्तु धीरे-धीरे यहाँ के शासक बन बैठे। अंग्रेजों के आने से हमारी भारतीय संस्कृति और भारतीय भाषाएं चरमरा गईं। हमारी भाषा और संस्कृति पाश्चात्य संस्कृति, भाषा और साहित्य ने भारतीय जनमानस को बहुत अधिक प्रभावित किया। पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण करने से हमारी सांस्कृतिक और भाषीय अस्मिता विलप्त-सी हो गई। अंग्रेजी भाषा के साथ भारतवासियों ने विदेशी चिन्तन पद्धति, विदेशी संस्कृति और विदेशी आचार व्यवहार भी स्वीकार कर लिया। इससे हमारा बहुत नुकसान हुआ। ब्रिटिश शासन ने अपनी भाषा-नीति में अंग्रेजी को सर्वोच्च स्थान दिया। मैकाले की शिक्षा-नीति के चलते विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी हो गया। अंग्रेजी की अनिवार्य शिक्षा ने इस देश के करोडों बच्चों को दिमागी तौर पर पंगु और अपाहिज बना दिया। अंग्रेजीदां लोगों ने उन्नति और अवसरों को हथिया लिया। अंग्रेजी के साथ सत्ता और सम्पन्नता जुड़ गई। मुट्ठी भर लोग अंग्रेजी के बल पर अमीर और शक्तिशाली बन गए। डब्ल्यू.बी. यीट्स ने लिखा है, 'भारत में अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा प्रणाली चलाकर ब्रिटेन ने भारत का सबसे

बड़ा नुकसान किया। उसने भव्य लोगों की आत्माओं में हीनता की भावना भरकर उन्हें नकलची बना दिया।' अंग्रेजी ने वर्ण-भेद को बढ़ावा दिया। जो अंग्रेजी पढ़ाता व बोलता वह सभ्य और विद्वान समझा जाने लगा। दूसरी ओर देश के करोडों गरीब, ग्रामीण, अशिक्षित अन्धकार में रहने के लिए अभिशप्त हो गए।

स्वतंत्रता आंदोलन के समय भारतीय नेताओं का ध्यान भाषायी अस्मिता की ओर गया। अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों में एक जागृति पैदा हुई और वे अपने अधिकारों के प्रति जागरुक हो गए। अंग्रेजों ने अंग्रजी शिक्षा का प्रचार-प्रसार इस उद्देश्य के लिए किया था कि अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग तन से भारतीय रहें किन्तु मन से अंग्रेज हो जाएं। परन्तु अंग्रेजी के माध्यम से हमने स्वतंत्रता, समानता और बन्धुत्व के विचार पढ़े जिसके कारण भारत में राष्ट्रीय चेतना पैदा हुई। स्वदेशी आन्दोलन के साथ-साथ भाषा का आन्दोलन भी चल पड़ा। भाषा का आन्दोलन मनुष्य मात्र की मुक्ति का आंदोलन मानकर हमारे राष्ट्रीय नेताओं ने आत्माभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का आंदोलन भी स्वतंत्रता आंदोलन के राथ जोड़ दिया। भारत के लोग अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी शिक्षा के विरुद्ध बोलने लगे। राष्ट्रीय चेतना के साथ स्वभाषा को राजपद दिलाने की मांग को भारतेन्दु हरिश्चन्द ने यूं व्यक्त किया -

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटै न हिय को शूल॥

देश में राष्ट्रभाषा के प्रति जागृति सर्वप्रथम बंगाल और महाराष्ट्र में हुई। सबसे पहले विद्यासागर और राजा राममोहन राय ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में अपनाने की बात कही थी। फिर 1857 में केशवचन्द्र सेन अपने समाचार पत्र में लिखा - 'हिन्दी ही अखिल भारत की जातीय भाषा या राष्ट्रभाषा बनने के योग्य है।' अपने पत्र में 'सुलभ समाचार' में श्री केशवचन्द्र सेन ने स्पष्ट शब्दों में भारत की एकता के लिए भाषा पर बल दिया था और इसके लिए हिन्दी को अपनाने को कहा था। 1882 में राजनारायण बोस और 1886 में भूदेव मुखर्जी ने भारत को एक जातीयता के सूत्र में

बाँधने के लिए हिन्दी की उपयोगिता के विषय पर विचार व्यक्त किए। राजा राममोहन राय ने कलकत्ता में 'बंगदूत' सन् 1826 में हिन्दी अंग्रेजी तथा बांगला में निकाला। स्वामी दयानन्द ने बाबू केशवचन्द्र सेन के कहने पर ही हिन्दी भाषा में लिखना और व्याख्यान देना शुरू किया। पंजाब में नवीन चन्द्र राय ने 1868 में 'ज्ञान प्रदायनी' के माध्यम से हिन्दी का प्रचार किया। बम्बई फ्री चर्च कॉलेज के प्राध्यापक श्री पेठे ने 1864 में 'राष्ट्रभाषा' नाम की एक मराठी पुस्तक में यह स्पष्ट किया कि भारत के लिए एक भाषा की आवश्यकता है और वह हिन्दी है। सन् 1824 में कलकत्ता से 'उदंत मार्तण्ड' पत्र प्रकाशित हुआ। सन् 1883 में राज राम पाल सिंह ने लन्दन से 'हिन्दुस्तान' नामक पत्र निकाला। बंकिमचन्द्र चटर्जी ने 1884 में हिन्दी का समर्थन किया। महाराष्ट्र में तिलक ने मराठी के साथ 'हिन्दी केसरी' निकाला। माधव राव सप्रे ने घोषणा की, 'हिन्दी अवश्य राष्ट्रभाषा बनाई जाए।भारतवर्ष की कोई दूसरी भाषा राष्ट्रभाषा बनने का दावा नहीं कर सकती।' 'वन्देमातरम्' समाचार पत्र में 1905 में सम्पादक अरविन्द घोष ने हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा बनाने की वकालत की। उसके आधार पर ही तिलक ने 1905 में काशी नागरी प्रचारणी सभा के अधिवेशन में समग्र भारत के लिए एक भाषा मान लेने को राष्ट्रीय आन्दोलन की संज्ञा दी। सुप्रसिद्ध शिक्षा-विशारद भूदेव मुखर्जी ने प्रशासन से लोहा लेकर बिहार की कचहरियों में हिन्दी भाषा और नागरी व कैथी लिपी को स्थान दिलाया था। उन्होंने अपने 'आचार प्रबंध' नामक पुस्तक में तथा अन्य जगह भी हिन्दी को अखिल भारतीय भावनाओं के एक्य का साधन कहा था। सन् 1900 के आसपास तक के गुजराती, मराठी व बंगाली हिन्दी प्रचारकों तथा समर्थकों में हरगोविन्द दास सेठ, श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, सदाशिवराव, योगेन्द्रनाथ वसु, अमृतलाल चक्रवर्ती, कालीप्रसन्न आदि उल्लेखनीय हैं। इसके बाद भी अहिन्दी लोगों ने ही राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी और राष्ट्रभाषा के आन्दोलन को विशेष रूप से आगे बढ़ाया जिसमें महात्मा गांधी, सुभाषचन्द्र बोस, राजगोपालाचार्य, कन्हैयालाल, माणिकलाल मुन्शी, पं. वैशम्पायन, न. वि.

गाडगिल, दिवाकर, सुनीति कुमार चटर्जी तथा अनन्त शयनम् आयंगार शामिल हैं।

लोकमान्य बालगंगाधर तिलक, महात्मा गांधी, सुभाषचन्द्र बोस, राजगोपालाचारी, महामना पं. मदनमोहन मालवीय, आचार्य नरेन्द्र देव, राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन आदि नेताओं ने हिन्दी की अस्मिता को पहचाना और हिन्दी के प्रचार-प्रसार में जुट गए। महात्मा गाँधी ने तो राष्ट्रभाषा हिन्दी के आन्दोलन को स्वतंत्रता आन्दोलन के साथ जोड़ दिया। उन्होंने स्वयं हिन्दी सीखी और अन्य लोगों को भी हिन्दी सीखने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने अप्रनी पुस्तक 'हिन्दी, स्वराज्य और होमरूल' में लिखा था, 'हर एक पढ़े-लिखे हिन्दुस्तानी को अपनी भाषा का, हिन्दू को संस्कृत का, मुसलमान को अरबी का, पारसी को पर्शियन का और सभी को हिन्दी का ज्ञान होना चाहिए.... हिन्दुस्तान के लिए अखिल देशीय भाषा हिन्दी होनी चाहिए ..... ऐसा होने पर हम आपस के व्यवहार में अंग्रजी को शीघ्र ही निकाल बाहर कर सकेंगे।' सन् 1906 में 'इण्डियन ऑपीनियन' में भी उन्होंने हिन्दी की वकालत की थी। 1937 में भरूच में दूसरी गुजरात शिक्षा परिषद् में सभापति पद से बोलते हुए उन्होंने राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर विस्तार से विचार व्यक्त किए -

'अगर गहराई से हम सोचें तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा नहीं बन सकती और न उसें बनना चाहिए। किसी भाषा में राष्ट्रभाषा बनने के लिए मुख्य रूप से पांच बातें होनी चाहिए -

1. सरकारी कर्मचारियों के लिए वह भाषा सरल होनी चाहिए।
2. भाषा ऐसी होनी चाहिए जिसके माध्यम से पूरे भारत में धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक विचार विनिमय हो सके।
3. उसका भारत के काफी लोग प्रयोग करते हों।
4. राष्ट्र के लिए सरल हो।
5. ऐसी भाषा का चुनाव करने में हमें केवल आज का लाभ न देखते हुए दूर तक देखना चाहिए।'

उन्होंने आगे स्पष्ट किया कि अंग्रेजी में इनमें से कोई गुण नहीं है और इनमें ऐसा कोई नहीं है जो हिन्दी में न हो इसलिए हिन्दी ही राष्ट्रभाषा होने योग्य है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के इन्दौर अधिवेशन में (सन् 1918) अपने अध्यक्षीय भाषण में गांधी जी ने कहा था -

'हिन्दी भाषा वह भाषा है जिसको उत्तर में हिन्दू व मुसलमान बोलते हैं और जो नागरी अथवा फारसी लीपि में लिखी जाती है। यह हिन्दी एकदम संस्कृतमयी नहीं है, न वह एकदम फ़ारसी शब्दों से लदी हुई है। ..... भाषा वही श्रेष्ठ है जिसको जनसमूह सहज से समझ ले।' इस तरह गांधी जी राजभाषा रूप में हिन्दी (हिन्दुस्तानी) भाषा तथा अखिल भारतीय लिपि के रूप में नागरी लिपि के समर्थक थे।

सुभाषचन्द्र बोस भी इस मत के थे कि भारत के भिन्न-भिन्न प्रांतों के भाइयों से बातचीत करने के लिए हिन्दी या हिन्दुस्तानी तो हमको सीखनी ही चाहिए। उनका मानना था कि प्रान्तीय विद्वेष को दूर करने में जितनी सहायता इस हिन्दी प्रचार से मिलेगी, उतनी दूसरी किसी चीज से नहीं मिल सकती। अपनी-अपनी प्रांतीय भाषाओं की भरपुर उन्नति कीजिए, पर सारे प्रांतों की भाषा का पद हिन्दी या हिन्दुस्तानी को ही मिलना चाहिए। महात्मा गांधी के अनुरोध के फलस्वरूप कांग्रेस के कानपुर अधिवेशन में सन् 1925 में यह प्रस्ताव पारित किया गया कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमीटी और वर्किंग कमीटी की कार्यवाही आमतौर पर हिन्दुस्तानी में चलेगी। सन् 1928 में स्वतंत्र भारत का संविधान बनाने के लिए सभी दलों की जो कॉन्फ्रेंस हुई उसमें पं. मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में 'नेहरू-रिपोर्ट' प्रस्तुत की गई जिसमें हिन्दुस्तानी को सर्वमान्य भाषा घोषित किया गया। इसी वर्ष दक्षिण भारत में चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने तमिल भाषा-भाषियों से हिन्दी पढ़ने की वकालत करते हुए कहा- 'केन्द्रीय सरकार और विधान सभाओं और प्रांतीय सरकारों की भारत सरकार से व्यवहार की भाषा हिन्दी ही होनी अनिवार्य होगी। राजनीतिक कारणों से कम महत्वपूर्ण

नहीं, ऐसी भारत की सांस्कृतिक एकता की मांग भी सामान्य रूप से बोली जाने वाली भाषा का ज्ञान है। यदि वृहद् भारत में प्रतिदिन का सम्पर्क नहीं बनाए रखा गया, तो दक्षिण प्रदेश उस सांस्कृतिक वृक्ष की निर्जीव शाखा मात्र रह जाएगा।' सन् 1929 में उन्होंने हिन्दी प्रचारक' में लिखा 'हिन्दी भावी भारत की राजभाषा है, हमें अभी से उसे जरूर सीख लेनी चाहिए।'

पं. जवाहरलाल नेहरू ने भी हिन्दी को शुरू से ही अपनाया और सन् 1937 में प्रांतीय सरकार बनने पर कहा : हर प्रांत की सरकारी भाषा राज्य के कामकाज के लिए उस प्रांत की भाषा होनी चाहिए। परन्तु हर जगह अखिल भारतीय भाषा के नाते 'हिन्दुस्तानी' को सरकारी तौर पर माना जाना चाहिए। नेहरू जी हिन्दुस्तानी को संस्कृत प्रधान या फारसी प्रधान बनाना नहीं चाहते थे। उनके अनुसार सामान्य व्यवहार में बोली जाने वाली सरल भाषा के ढंग पर हिन्दुस्तानी साहित्यिक भाषा बना लेनी चाहिए। उन्होंने कहा था, 'हिन्दुस्तानी अर्थात् हिन्दी अपने सभी रूपों सहित 14 करोड़ (सन् 1931 की जनगणना के अनुसार) भारतवासियों द्वारा बोली जाती है। इसके अलावा भारत के अन्य भाषी क्षेत्रों में हजारों-लाखों लोग हैं जो हिन्दी बोल सकते हैं। शायद यही वजह है कि बापू जी ने हिन्दुस्तानी (हिन्दी) को राष्ट्रभाषा का नाम दिया। हिन्दी की नींव में संस्कृत है तो सजावट फारसी ने की है। द्रविड़ आदि बोलियों या भाषाओं से भी हिन्दुस्तानी शब्द लेने में संकोच नहीं करती है। मुझे इसमें जरा-सा भी शक नहीं है कि हिन्दुस्तानी ही भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा होगी। दरअसल रोजमर्रा के कामकाज की दृष्टि से देखें तो काफी हद तक हिन्दुस्तानी से ही हिन्दुस्तान का काम होता आया है। इसको मतलब यह है कि हिन्दुस्तानी ही हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा है। अंग्रेजी आज संसार की व्यापक व महत्वपूर्ण भाषा है मगर इसका मतलब यह नहीं है कि हम हिन्दुस्तानी अपनी पहचान, अपना स्वाभिमान और आज़ादी को अंग्रेजी के हाथ में गिरवी रख दें। इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वतंत्रता आंदोलन के समय हिन्दी भारत की आशा, आकांक्षा, उमंग और चेतना की संवाहिका बन गई।

उसने कोटि-कोटि जनों को आकर्षित किया। 'जय हिन्द' का नारा आज़ाद हिन्द फौज का राष्ट्रीय नारा और 'वन्देमातरम्' गीत राष्ट्रगीत बन गया और हमारे क्रान्तिकारी, स्वतंत्रता सैनानी एक मंत्र की तरह उसका जप करने लगे। इस तरह भारतीय जनता ने भाषायी अस्मिता को पहचाना और उसके लिए आन्दोलन भी छेड़ा। राजर्षि पुरोषोत्तम दास टण्डन ने कहा था, 'मेरे लिए हिन्दी की समस्या भारत की स्वतंत्रता से राष्ट्र की समस्या से सम्बन्धित है। भारत में अंग्रेजी भाषा की प्रधानता स्वीकार करना अंग्रेजी जीवन-सिद्धांत के सामने सिर झुकाना है। यह हमारी बौद्धिक दासता का सूचक है।' गांधीजी ने भी कहा था, 'राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है।' इस प्रकार राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्रीय एकता और भावनात्मक एकता का संवर्द्धन और पोषण नहीं हो सकता। वास्तव में हिन्दी लोक भाषा है और उसकी शक्ति जन-शक्ति में ही निहित है। हिन्दी इस देश की जीवन शक्ति है। वह भारत की मिट्टी से पैदा हुई है और एक विराट समुदाय की भाषा है। हमारा सम्पूर्ण मानस जगत हिन्दी से ही अभिव्यक्त हो सकता है। यही कारण है कि स्वतंत्रता के पूर्व हिन्दी राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित हो चुकी थी। वस्तुतः हिन्दी के माध्यम से सम्पूर्ण राष्ट्र को एक ही झण्डे के तले लाने का स्वप्न बहुत पहले से ही देश का बुद्धिजीवी वर्ग और नेतागण देख चुके थे। हिन्दी को स्वाधीन भारत की राजभाषा के रूप में ग्रहण करने की कल्पना को मूर्त रूप देने के लिए प्रयत्न भी किए जाने लगे थे। देश महात्मा गांधी का आभारी रहेगा कि उन्होंने हिन्दी में न केवल स्वाधीनता हेतु जनसंपर्क की भाषा खोजी अपितु उसके माध्यम से राष्ट्रीय एकता के शंख का उद्घोष भी किया।

अंततः 15 अगस्त 1947 को भारत आज़ाद हुआ और हमारे राष्ट्रीय नेताओं द्वारा हिन्दी को राष्ट्र भाषा पद पर आरूढ़ देखने का सपना साकार होने का समय आ गया। 21 सितम्बर 1947 को गांधी जी ने 'हरिजन सेवक' में लिखा, 'मेरा कहना है कि जिस तरह हमारी आज़ादी को छीनने वाले अंग्रेजों की सियासी हुकूमत को सफलता पूर्वक हमने इस देश से निकाल दिया उसी तरह हमारी संस्कृति को दबाने वाली

अंग्रेजी भाषा को भी हमें यहाँ से निकाल देना चाहिए।' उनका विश्वास था कि चूंकि अब देश आज़ाद हो गया है, अंग्रेजों के साथ अंग्रजी भी सात समुद्र पार चली जाएगी और देश में राष्ट्रभाषा हिन्दी पूरी तरह स्थापित हो जाएगी। चूंकि स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान ही यह बात स्पष्ट हो गई थी कि भारत के लिए एक प्रतिनिधि या संपर्क भाषा की आवश्यकता है और वह भाषा अपेक्षाकृत अधिक लोगों द्वारा बोली जाने के कारण हिन्दी ही हो सकती है। फलतः भारत के स्वतन्त्र होने पर हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया गया। भारत के संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार संघ की सरकारी भाषा देवनागरी लिपि में हिन्दी होगी साथ ही यह भी कहा गया है कि संघ के सरकारी कामकाज में नागरी अंकों के स्थान पर रोमन अंकों का प्रयोग होगा।